P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-1* (Part-1) September- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आधुनिकता की दौड़ में संस्कृत की उपेक्षा किन्तु समृद्ध भविष्य

मधुबाला मीना
सहायक आचार्य
संस्कृत विभाग,
गौरी देवी राजकीय महिला महाविद्यालय,
अलवर

सारांश

''जननी जन्मभूमिश्च स्वार्गादपि गरीयसि'' महर्षि वाल्मीकि के इन वाक्यों से हमारी प्राणचेतना का अनुष्ठान होता है। किन्तु आधुनिकता की अन्धी दौड़ में जन्मदात्री चाहे माँ हो या भाषा इनकी उपेक्षा की जा रही है। पाश्चात्यानुकरण से मानवीय, सामाजिक नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों तथा गुणों में आई गिरावट के साथ–साथ संस्कृत भाषा और उसके साहित्य का भी क्षरण हुआ है जिससे संस्कृत के समक्ष उसका चिरतोपार्जित गौरव व अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को बनाये रखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो गया है। संस्कृत भाषा का राष्ट्र और उसकी संस्कृति तथा सांस्कृतिक अस्मिता के साथ जितना घनिष्ठ सम्बंध है, उसके अनुरूप देश की शिक्षा पद्धति में उतना महत्व तथा स्थान प्राप्त नहीं हुआ और इसी कारण आज संस्कृत अपमानित, तिरस्कृत, उपेक्षित, बहिष्कृत और अव्यवस्थित रूप से अपना जीवनयापन करने को मजबूर है।

मुख्य शब्द : संस्कृत भाषा, भौतिकवादी युग, व्यावसायिक पाठ्यक्रम।

प्रस्तावना

वर्तमान समय के भौतिकवादी युग में रोजगारपरक व व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को ज्यादा महत्व देने के कारण संस्कृत की उपेक्षा की जाती है। अन्य भाषाओं की अपेक्षा संस्कृत वर्तमान पीढ़ी को क्लिष्ट प्रतीत होने के कारण विद्यार्थी इसके प्रति उदासीन रहते है। प्राचीन समय की भाँति बोलचाल में न आने के कारण भाषा की स्थिति में गिरावट आई है। प्रारम्भिक स्तर से उच्च स्तर तक संस्कृत शिक्षा विद्यमान है किन्तु शिक्षा प्रणाली वैज्ञानिक होते हुए भी अभी तक उपेक्षा के कारण अवैज्ञानिक बनी हुई है। स्कूल स्तर पर प्रारम्भ में संस्कृत माध्यम से न पढ़ाये जाने के कारण और 11 वीं, 12वीं कक्षा का माध्यम संस्कृत कर दिये जाने के कारण भी छात्रों को क्लिष्ट प्रतीत होती है। इसलिए भी संस्कृत भाषा की स्थिति में गिरावट आयी है। कॉलेज स्तर पर विद्यार्थी 12वीं कक्षा के संस्कृत माध्यम के भय से संस्कृत को नहीं लेना चाहते और यदि ले भी लेते है तो पूरे वर्ष भर उसे बदलवाने के लिए घूमते रहते हैं।

बीस सूत्रीय कार्यक्रम, आयोजन, समन्वयन एवं क्रियान्वयन समिति के उपाध्यक्ष डॉ. दिगम्बर सिंह ने कहा कि भारतीय संस्कृति के मुख्य आधार में संस्कृत, आयुर्वेद एवं योग शामिल हैं लेकिन दुर्भाग्य है कि आज की युवा पीढ़ी का झुकाव पाश्चात्य संस्कृति की ओर होने के कारण भारतीय संस्कृति की दुर्दशा हुई है।[1] यह कटु सत्य है कि अंग्रेजी भाषा के चारों तरफ शोरगुल होने के कारण आज संस्कृत भाषा की वह दशा हो गयी है जैसे किसी पुत्र द्वारा उपेक्षित माता की होती है। अंग्रेजों के समय में भी संस्कृत भाषा का उत्थान नहीं हुआ और अंग्रेजी धीरे–धीरे सभी कार्यालयों की भाषा बन गयी थी। संस्कृत भाषा पर किस तरह के जुल्म ढहाये गये, इसका विस्तृत वर्णन ''पं. अम्बिकादत्त व्यास'' ने अपने ''शिवराज विजय'' नामक काव्य में किया है। आज कालिदास, बाणभट्ट, हर्ष भारवी, माघ, भवभूति, पाणिनी, आर्यभट्ट, चरक, वाल्मिकी, व्यास इत्यादि जैसे कोई कवि भी जन्म न ले सके, जो संस्कृत साहित्य को अपनी लेखनी से चमत्कृत करने में समर्थ प्रतीत होते हो।

यदि हमें पाश्चात्यानुकरण की अंधी दौड़ से भारतीय मानवीय मूल्यों को दुष्प्रभावित होने से बचाना है तो अपनी प्राचीन सांस्कृतिक विरासत के विशाल समुद्र में बार–बार गोता लगाकर अपने पुराने शाश्वत जीवन मूल्यों को अपनाना होगा, जिसकी एकमात्र धुरी संस्कृत भाषा के ज्ञान में निहित है, जिससे भारत का प्रत्येक व्यक्ति सम्पूर्ण विश्व में पृथक पहचान कराने में सक्षम होता है। भारत के प्रधानमंत्री **''पण्डित जवाहरलाल नेहरू''** ने कहा था कि 'यदि मुझसे पूछा जाये

कि भारत के पास सबसे अमूल्य निधि क्या है? और उसके पास सर्वोत्कृष्ट विरासत क्या है ? तो मैं बिना हिचक–झिझक के कह सकता हूँ कि वह है – संस्कृत भाषा और साहित्य तथा उसमें निहित ज्ञान। यह एक वैभवशाली परम्परा है जब तक यह बनी रहेगी तब तक भारतीय समाज को प्रभावित करती रहेगी और भारत की मौलिक प्रतिभा अजेय रहेगी। पण्डित नेहरू के उपर्युक्त मत से केवल भारत के ही नहीं विदेशी विद्वान भी शत–प्रतिशत सहमत रहे हैं। सन् 1956 में भारत सरकार द्वारा नियुक्त एक उच्चस्तरीय संस्कृत आयोग की रिपोर्ट में ऐसे भारतीय तथा विदेशी विद्वानों के मत उदृत हैं।[2]

जब अंग्रेज इस देश में आया तो उसका परिचय सर्वप्रथम संस्कृत भाषा और साहित्य से हुआ। कालिदास के नाटक और उपनिषदों से अंग्रेजों के माध्यम से पूरा यूरोप परिचित हो गया था। गेटे जैसे महाकवि ने अभिज्ञान शाकुन्तलम् की और शॉपन हॉवर जैसे दार्शनिक ने उपनिषदों की भूरि–भूरि प्रशंसा की। **मैक्समूलर** ने तो पूरा ग्रंथ ही लिख दिया जिसका शीर्षक था 'हमें भारत क्या सिखा सकता है ? इधर शिकागों (अमेरिका) में स्वामी विवेकानन्द के भाषण ने वेदान्त की धूम मचा दी। परिणाम यह हुआ कि यूरोप के सभी प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में बड़े उत्साह से संस्कृत का अध्ययन–अध्यापन शुरू हो गया। इन विश्वविद्यालयों के विद्वानों द्वारा लिखे गये ग्रंथ भारतीय विश्वविद्यालयों में भी मानक ग्रंथों की तरह पढ़ाये जाने लगे। संस्कृत साहित्य का इतिहास सर्वप्रथम पश्चिम के ही विद्वानों ने लिखा है। आज हम जिसे वैज्ञानिक अनुसंधान कहते हैं उसकी नींव भी भारतीय विधाओं के क्षेत्र में पश्चिमी विद्वानों ने ही डाली है।[3]

पाण्डुलिपियों के संदर्भ में मैक्समूलर का ही कथन था कि –''मेरी समझ में इटली और यूनान के सम्पूर्ण साहित्य को एकत्रित कर लिया जाए तो भी संस्कृत की पाण्डुलिपियाँ उनसे कहीं अधिक हैं।[4] भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू से लेकर विदेशी विद्वान मैक्समूलर तक जो कह चुके हैं उसका सारांश यह है कि संस्कृत, भारत की आत्मा तो है ही, उसके पास पूरे विश्व को देने के लिए भी बहुत कुछ है।

प्राचीन काल में हम देखते है कि संस्कृत वानर एवं राक्षस संस्कृति पर्यन्त प्रचलित जनभाषा थी। जिसका प्रमाण रामायण के सुन्दरकाण्ड में रामदूत का अशोक वाटिका में कहा गया यह कथन –

''यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम्।
श्रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति।।[5]

दशमं शताब्दी ई0 में संस्कृतं नगरी के रूप में परमारवंशी राजा भोज द्वारा स्थापित धारा नगरी जहां सभी संस्कृतं भाषी थे। राजा भोज ने तो यह घोषणा भी की थी कि –

''य कोऽपि जनः संस्कृत न जानाति सः नरः राज्यात बर्हिगच्छतु।'

गुप्तकाल एवं राजा हर्ष के समय महाराज स्वयं संस्कृत के ज्ञाता एवं कवि होते थे, इसीलिए राजदरबारों की भाषा संस्कृत ही थी।

दण्डी 'सप्तम शतक' ने प्राकृत भाषा से भेद दिखलाने के अवसर पर 'संस्कृत' का प्रयोग स्पष्ट रूप से करते हुए लिखा है –

''संस्कृतं नाम देवी वागन्वाख्याता महर्षिभिः।''[6]

डॉ. राधाकृष्णन का कथन भी यही कहना है कि– संस्कृत अनेक भाषाओं की जननी है, जिससे अनेक भारतीय भाषाएँ उत्पन्न हुई हैं। महर्षि वेद व्यास के अनुसार परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में ही वेद के रूप में अपेक्षित ज्ञान का प्रकाश दिया है। मानव को कर्मशील बनाने के लिए वेद का शाश्वत सन्देश है कि हम कर्त्तव्यनिष्ठ होकर अनासक्ति भाव से कर्म में प्रवृत्त हो –

''कुर्वन्नेहे कर्माणि जिजिविषेच्छतं समा।।''[7]

हमें मिलकर कार्य करने की प्रवृत्ति की ओर प्रेरित करता हुआ यह कथन भी विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से ही प्राप्त हुआ है। –

समानी व आकूति समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।[8]

महर्षि मनु ने समस्त मानवों को भारत से अपने–अपने चरित्र की शिक्षा ग्रहण करने का निर्देश दिया है –

एतद् देश प्रसूतस्य सकाशदग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवः।[9]

स्मृतिकारों ने धर्म का मूल यदि किसी ग्रंथ को कहा है, तो वो वेदों को ही कहा है। –

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीलश्च तद्विदाम।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च।।[10]

वेदों का अपना सांस्कृतिक महत्व है, समस्त ज्ञान–विज्ञान तथा आदर्शों, की पुष्टता वेदों से ही मिलती है। मानव जीवन के लक्ष्यभूत चार पुरूषार्थ माने गये है महर्षि वेदव्यास जी ने महाभारत के विषय में लिखा है कि–

धर्म चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतवर्षम।
यदिहास्ति यदन्यत्र, यन्नाहास्ति न तत क्वचित्।।[11]

महर्षि व्यास का अन्य कथन यह भी है कि ''न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित् अर्थात् मनुष्य इस सृष्टि की सर्वोत्तम व सुन्दर रचना है, मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है।

ऊँ सहनाभवतु सह नौ भुनक्तु सहवीर्य करवावहै।
तेजस्विनाऽवधीतमस्तु मा विद्विषावहै।।[12]

इसी प्रकार यदि सारे सांस्कृतिक तत्वों का अध्ययन करें तो हमें सबके मूल में संस्कृत भाषा ही दिखलाई पड़ती है अर्थात् सारे सांस्कृतिक मूल्यों की पराकाष्ठा यदि कहीं पर देखने को मिलती है तो वह संस्कृत भाषा ही है। संस्कृत भाषा को देववाणी का स्थान प्राप्त है, हमारे धर्म से सम्बन्धित सभी ग्रंथ इसी भाषा में निबद्ध है। हमारी संस्कृति के मूलाधार सोलह संस्कार भी हमें संस्कृत भाषा में देखने को मिलते हैं। संस्कृत भाषा संस्कारित, परिमार्जित तथा परिष्कृत भाषा है, इसमें बताये गये संस्कारों से अन्तःकरण की शुद्धि होती है और इसमें सांस्कृतिक विचार, उच्च आदर्श, नैतिक मूल्य पूर्णरूप से समाहित है। यथा–

वसुधैव कुटुम्बकम्।

सबको साथ लेकर चलना, बोलना, सभी के सुख की कामना करना हमारी संस्कृति में ही देखने को मिलती है। यथा –

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे सञ्जनानां उपासते।।

अन्य

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।

संस्कृत भाषा में ही इस प्रकार के उत्प्रेरणात्मक सिद्धान्त हमें देखने को मिलते हैं। भारतीय संस्कृति में समाहित ये उच्च आदर्श देश को विश्वगुरु की पदवी पर आरूढ़ करते हैं। संस्कृत आयोग ने भी अपने प्रतिवेदन में लिखा कि भारतीय सभ्यता वैदिक काल के आरम्भ से ही संस्कृत के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को प्रदर्शित कर रही है। संस्कृत भाषा का मूलाधार आध्यात्मिकता है, जो भारत की अद्वितीय अभिव्यक्ति है। जैसे –

भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा'।

पं. प्रभुदत्त शास्त्री ने संस्कृत को राज्ञी, हिन्दी को मन्त्रिणी तथा अन्य भाषाओं को 'सभ्या' कहा है–

संस्कृतभाषा राज्ञी, हिन्दी तन्मन्त्रिणी चाऽस्तु।
अन्याः सभ्याः सत्यः स्वस्थथानेषु तिष्ठन्तु।।[13]

विद्वानों ने और भी कहा है–

'संस्कृते संस्कृतिर्ज्ञेया, संस्कृते सकलाः कला।
संस्कृते सकलं ज्ञानं, संस्कृते किं न विद्यते।।[14]

महर्षि कपिलदेव द्विवेदी भी इस बात की पुष्टि करते हुए कहते हैं कि –

संस्कृतं संस्कृतेर्मूलं ज्ञान विज्ञानवारिधिः।
वेद तत्वार्थसंजुष्टं लोकाऽलोककरं शिवम्।।[15]

अतः यह बात सुस्पष्ट है कि संस्कृत भाषा के बिना भारतीय संस्कृति का कोई आधार नहीं है। सृष्टि के प्रारम्भ में स्वयंभू परमात्मा से ऐसी दिव्य वाणी का प्रादुर्भाव हुआ जो नित्य है और जिससे संसार की गतिविधियां संचालित हुई है। यह दिन सृष्टि संवत्सर भी है जो एक अरब पिच्यानवें करोड़ अट्ठावन लाख पिचासी हजार वर्ष पूर्व रविवार को प्रारम्भ हुआ था।[16] ज्ञान की दृष्टि से देखे तो संस्कृत भाषा ज्ञान का समुद्र है। जीवन का शायद ही कोई पक्ष हो, जिस पर संस्कृत साहित्य में पर्याप्त सामग्री न मिल पाए। आधुनिक खोजें भी उस गहराई तक नहीं पहुँच सकी है, जो हमें संस्कृत साहित्य में सहज ही उपलब्ध हो जाती है। संस्कृत भाषा अधिकांश भारतीय भाषाओं की जननी तथा संपोषक रही है। भारत में प्रचलित हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगाली, उड़िया एवं असमी भाषाओं का उद्गम स्रोत संस्कृत ही है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी अपने देशवासियों के लिए देववाणी संस्कृत का ज्ञान बहुत जरूरी समझते थे। 20 मार्च 1927 को हरिद्वार की राष्ट्रीय शिक्षा परिषद में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था – संस्कृत का अध्ययन करना प्रत्येक भारतीय विद्यार्थी का परम कर्तव्य है। हिन्दूओं का तो है ही, मुसलमानों का भी है क्योंकि उनके पूर्वज भी राम एवं कृष्ण ही थे। और अपने इन पूर्वजों को जानने के लिए उन्हें संस्कृत सीखनी चाहिए। उनका मानना था कि संस्कृत के ज्ञान से सभी भारतीय भाषाओं को जानने के द्वार खुल जाते हैं। संस्कृत हमारी भाषाओं के लिए गंगा नदी है, इस संस्कृत भाषारूपी गंगा नदी के सूखने से सभी भाषाएँ मृतप्रायः हो जायेंगी। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का मानना था कि –संस्कृत वाड्मय भारत की ही नहीं अपितु सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक अमूल्य निधि है। उसकी प्राचीनता, व्यापकता, विशदता, सौन्दर्यता और मधुरता सभी तो ऐसी है जिनसे न केवल आज तक की संस्कृति का सारा इतिहास ज्योतिर्मय हो उठता है वरन् मानव हृदय आनन्द से विभोर हो जाता है। श्री लाल बहादुर शास्त्री जी का मानना है कि – संस्कृत तो हमारे देश की अमूल्य निधि है। यह सर्वसम्मत तथ्य है कि संस्कृत के अध्ययन से देश के इतिहास के वास्तविक ज्ञान को जानने एवं समझने में बड़ी सफलता मिलती है।

संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति का संवाहक है। सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में से रामायण, महाभारत, पुराण तथा वेद, उपनिषद और गीता के प्रसंग निकाल दें तो पता चलेगा कि हमारा साहित्य कितना दरिद्र है। जो संस्कृत के विशेषज्ञ है या बनना चाहते हैं वे तो इस साहित्य का पूरा अनुशीलन करते ही है किन्तु तीसरी भाषा के रूप में संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों को भी इस साहित्य का इतना परिचय तो दिया जाता है कि वह जान सकें कि इस देश की संस्कृति की जड़ें कितनी गहरी है। वह आभास पा सकता है कि हमारे पास विदेश से लेने को बहुत कुछ है तो वहां देने को भी बहुत कुछ है, इसे हम ही नहीं विदेशी भी स्वीकार कर रहे हैं। अन्यथा संयुक्त राष्ट्र संघ में योग दिवस मनाने के प्रस्ताव को इतने अधिक देशों का समर्थन नहीं मिलता। आज प्रत्येक देश योग दिवस को उत्सव के रूप में उत्साह से मनाता है। हमें गुलामी के दिनों की इस हीनता से उबरना होगा कि हमें अंग्रेजी ही सभ्य बना सकती है। **स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, रविन्द्र नाथ टैगोर, महात्मा गांधी और राधाकृष्णन** जैसे दिग्गज, भारतीय संस्कृति का डंका पूरे विश्व में बजा चुके हैं। जो संस्कृत की आवश्यकता पर प्रश्नचिह्न लगा रहे हैं ? उन्हें गंभीरता से यह विचार करना चाहिए कि ये सभी महापुरूष क्या संस्कृत साहित्य की सहायता के बिना एक कदम भी आगे बढ़ सकते थे ? इनके चिन्तन में से उपनिषद और गीता को निकाल लें, तो फिर क्या बचेगा ?[17] **स्वामी विवेकानन्द** का प्रसिद्ध आह्वान था कि –''उत्तिष्ठत् जागृत प्राप्य वरान्निबोधत्''[18] इस कथन को साकार करने के लिए हमें पुनः कृतसंकल्प होना पड़ेगा। पण्डित नेहरू का कथन – ''संस्कृत भारत की अमूल्य धरोहर है, संस्कृत को खो देने पर भारत, भारत नहीं रहेगा।'' इस तरह के वाक्यों को ध्यान में रखकर हमारी सांस्कृतिक विरासत को सहेजने की महती आवश्यकता है। आज संस्कृत के अर्थों में पुस्तकालय भाषा या लाइब्रेरी लैंग्वेज रही है जो कि कितने विशाल वाड्.मय वारिधि में अवगाहन का द्वार खोलती है। इस वाड्.मय का कुछ विशाल अंश तो पिछली सदियों में भी अध्ययन–अध्यापन विवेचन–विमर्श आदि का विषय रहा है किन्तु बहुत सा अंश अब इतिहास की वस्तु ही बनकर रह गया है। कुछ इस प्रकार विलुप्त हो गया है कि इतिहास में भी उसका उल्लेख नहीं हो पाया है।[19]

इस देश के इतिहास का ज्ञान संस्कृत के ज्ञान के बिना अधूरा है। वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद

में निहित इस देश की मूल संस्कृति तो संस्कृत में है ही, ''गुप्तकाल का इतिहास संस्कृत के शिलालेखों में है तो काश्मीर के राजाओं का इतिहास कल्हण की राजतरंगिणी में है।'' किन्तु इस सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रागैतिहासिक काल की वे घटनाएँ जिनका ज्ञान केवल रामायण, महाभारत और पुराणों से ही हो सकता है। विज्ञान का इतिहास किसी एक देश का नहीं होता अपितु वैश्विक होता है। संस्कृत के साहित्य से पता चलता है कि रेखागणित की उत्पत्ति शुल्व सूत्रों से हुई और यूनान के पाइथोगोरस द्वारा खोजी गई थ्योरम उनसे कही पहले इस देश में खोज ली गई थी। शून्य और दशमलव प्रणाली का आविष्कार भी यहाँ हुआ था। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है न कि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर यह सत्य पश्चिम से अनेक शताब्दियों पूर्व इस देश के ज्योतिषियों ने जान लिया था। इन कारणों से विदेश में जो भी व्यक्ति भारत के इतिहास और संस्कृति का काम करना चाहता है उसके लिए संस्कृत का ज्ञान अनिवार्य माना जाता है।[20]

भारतीय संस्कृति की संवाहिका संस्कृत भाषा तथा उसका विशाल वाड़मय धर्म, दर्शन, इतिहास, पुराण, ज्योतिष, राजनीति एवं विज्ञान आदि सभी विषयों के ज्ञान के लिए अत्यन्त उपयोगी है। आयुर्वेद के विख्यात आचार्य सुश्रुत, चरक, ध्नवन्तरि आदि ने संस्कृत में महादुर्लभ एवं अनमोल ग्रंथों का प्रणयन किया और साथ ही शल्यक्रिया के अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। भाषा वैज्ञानिकों ने भी संस्कृत भाषा के महत्व को मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है। संस्कृत, साहित्य भारत की ही नहीं, अपितु पूरे विश्व की अखण्ड़ता की वाहक है। चाहे वेद हों, जैनागम हो अथवा बौद्ध त्रिपिटक हो सम्पूर्ण साहित्य में वैश्विक दृष्टि मिलती है। राजभाषा आयोग के प्रतिवेदन में यह कहा गया है कि समस्त भारतीय भाषाओं में जो समान शब्दावली दिखाई देती है इसका कारण है– एक ही स्रोत से निकलना। वह स्रोत है – संस्कृत वाड्.मय। अतः राष्ट्र की एकता का व्रत लेने वाले हम लोगों को इसको दैनिक जीवन में अपनाना चाहिए।[21]

संस्कृत की उपेक्षा भारत और संसार की एक अपूरणीय क्षति कर देगी। इतना अवश्य है कि संस्कृत के विद्वानों को अब संस्कृत की इस निधि को इस रूप में प्रस्तुत करना चाहिए कि पूरे समाज को उसका महत्व अनुभव हो सके। सिद्ध करना है कि संस्कृत अतीत व वर्तमान की ही नहीं अपितु भविष्य की भी भाषा है। संस्कृत एक वैज्ञानिक भाषा है, इसके अक्षर, सृष्टि के अक्षर पुरूष से समानता रखते है। हमारी सृष्टि व अक्षर सृष्टि भी वाक शब्द सृष्टि है। हमारे स्वर व्यंजन भी योषा–वृषा के आधार पर कार्य करते हैं, उनका एक निश्चित अर्थ परम्परा व अनेक अर्थ होते हैं। हमारे पुराण कथाओं में विज्ञान के सूत्र छिपे हुए हैं, इनकी सहायता से हम वेदों में छिपे हुए अनेक रहस्यों को प्रकाशित कर सकते हैं।

भारत के वरिष्ठ अन्तरिक्ष वैज्ञानिक **ओमप्रकाश पांडे** ने बताया कि – वेदों में निहित ध्वनि विज्ञान के बारे में दिए गए उनके व्याख्यान को आधार मानकर **न्यूजीलैंड के एक वैज्ञानिक स्टेन क्रो** ने एक डिवाइस विकसित किया। ध्वनि पर आधारित इस डिवाइस से मोबाइल की बैटरी चार्ज हो सकती है, इस डिवाइस का नाम ओम डिवाइस रखा गया है। उन्होंने कहा कि संस्कृत को अपौरूष भाषा इसलिए कहा जाता है कि इसकी रचना ब्रह्माण्ड की ध्वनियों से हुई है। सूर्य की नौ रश्मियाँ और पृथ्वी के आठ बसुओं की आपस में टकराने से जो 72 प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न हुई वे संस्कृत के 72 व्यंजन बन गए। इस प्रकार कुल 108 ध्वनियों पर संस्कृत की वर्णमाला आधारित है। ब्रह्माण्ड की ध्वनियों की जानकारी भी वेदों से ही मिलती है। इन ध्वनियों को नासा ने भी माना है। इसलिए यह बात साबित होती है कि वैदिक काल में ब्रह्माण्ड में होने वाली ध्वनियों का ज्ञान ऋषियों को था।[22]

अध्ययन का उद्देश्य

वर्तमान समय के भौतिकवादी युग में रोजगारपरक व व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की महत्ता के कारण तथा विज्ञान एवम् तकनीकी शिक्षा के बढ़ते प्रभाव के कारण प्राचीन भाषा संस्कृत के मंत्र विद्या, यज्ञ विद्या, ध्वनि विज्ञान, आभा मण्डल, योग, ब्रह्माण्ड के उद्भव आदि विषयों को नया प्रकाश देकर नया रूप देना तथा अल्ट्रामार्डन व कम्प्यूटर के लिये उपयुक्त बनाना।

निष्कर्ष

अतः संस्कृत ने भारत की महान परम्परा के विकास और प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आज भी वह लोगों के पूजा–पाठ के लिए पण्डितों द्वारा प्रयुक्त होती है। स्वर्णिम अतीत देखने का अपरिहार्य वातायन है।[23] अतीत और वर्तमान को जानने के लिए संस्कृत के महत्व की अपेक्षा भविष्य के निर्माण के लिए उसका महत्व और भी अधिक है। इस वैज्ञानिक युग में अपूर्व प्रगति के बावजूद हम सभी एक अपूर्णता का अनुभव करते हैं, इस अपूर्णता को संस्कृत में निहित अध्यात्म ही दूर कर सकता है।। बाहरी जगत का विश्लेषण विज्ञान करता है किन्तु अर्न्तजगत् की भावनाओं को संस्कृत चित्रित करती है। इस दृष्टि से संस्कृत के महत्व को समझे। विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा में संस्कृत का इतना प्रवेश अनिवार्यतः कर दिया जाए कि छात्र गीता तथा रामायण पढ़ सके, इसे भार न मानकर विज्ञान का परिपूरक माना जाए। दूसरी ओर संस्कृत के छात्रों को भी अंग्रेजी व विज्ञान का ज्ञान इतना अनिवार्य कर दिया जाए कि वे उन अधुनातन खोजों से परिचित हो सके जिनसे मन्त्रविद्या, यज्ञविद्या, आभामण्डल, योग, ब्रह्माण्ड के उद्भव आदि प्राचीन विषयों पर नया प्रकाश पड़ता है और जिससे छात्र प्राचीन धरोहर को आधुनिक युग में समझी जाने वाली भाषा कह सके।[24] अभी हाल ही मे समाचार पत्र दैनिक भास्कर के लेख में कहा गया है कि **जे.एन.यू.** ने संस्कृत को एक रोजगारपरक भाषा बनाने के लिए अनेक कोर्स प्रारम्भ किये है। **एसएसआईएस** के डीन **गिरिश नाथ झा** बताते हैं कि– हम संस्कृत की छवि तोड़ना चाहते है। यह प्राचीन भाषा है जो अल्ट्रा मॉडर्न भी है और कम्प्यूटर के लिए उपयुक्त है। जेएनयू में अनेक कोर्स 2019 के नए सत्र से शुरू होंगे। इनमें हर धर्म जाति, समुदाय और लिंग के छात्र एडमिशन ले सकेंगे। 'झा' कहते है कि वे आने वाले वक्त में देशभर के मन्दिरों में जेएनयू से प्रशिक्षित पण्डितों को पूजा–पाठ करते देखना चाहते है। प्रशिक्षण में छात्रों

को श्रुति पर आधारित स्रोतसूत्र, स्मृति या परम्परा पर आधारित स्मृति सूत्र जैसे पाठ पढ़ाए जाएंगे। 23 फरवरी 2018 को एसएसआईएस की स्कूल कॉर्डिनेशन कमेटी में अनेक कोर्स कराने का निर्णय लिया गया। 2001 में स्थापित स्पेशल सेन्टर फॉर संस्कृत स्टडीज को पूरी तरह अपग्रेड कर दिसम्बर 2017 में स्कूल ऑफ संस्कृत एंड इंडिक स्टडीज के रूप में तब्दील किया गया।[25] अतः यह भाषा अपनी वैज्ञानिकता, साहित्यिक एवं वैचारिक सम्पदा तथा प्रतिपाद्य विषयों की विविधता के कारण सम्पूर्ण जनमानस में सद्भाव एवं समभाव के साथ जुड़ी हुई है, यह व्यापार की नहीं, परिवार की भाषा है। इसके प्रचार से सर्वत्र पारिवारिक वातावरण की रचना की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *दैनिक नवज्योति, 4 मार्च 2017 लेख–भारतीय संस्कृति को बचाने में संस्कृत भाषा की भूमिका अहम*
2. *राजस्थान पत्रिका 2 अगस्त, 2012 दयानन्द भार्गव लेख – ताकि संस्कृत से जीवन चले*
3. *राजस्थान पत्रिका, 24 अक्टूबर लेख– संस्कृत के भविष्य का प्रश्न*
4. *लेख संस्कृत की प्रासंगिकता, श्री लाल बहादुर शास्त्री, कुलपति राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ*
5. *रामायण सुन्दरकाण्ड – 5/14*
6. *दण्ड़ी काव्यादर्श–1/33*
7. *ईशावास्योपनिषद–2*
8. *ऋग्वेद–10/191/4*
9. *मनुस्मृति 2/20*
10. *मनुस्मृति 2/6*
11. *महाभारत, आदिपर्व*
12. *कठोपनिषद शान्ति पाठ*
13. *संस्कृत वागविजयम्–12*
14. *संस्कृत की व्युत्पत्ति– डॉ. रामधर शास्त्री*
15. *संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. उमाशंकर ऋषि*
16. *राजस्थान पत्रिका, लेख डॉ. शुद्धात्म प्रकाश जैन लेख– आखिर कब तक संस्कृत की उपेक्षा की जाती रहेगी।*
17. *राजस्थान पत्रिका लेख, संस्कृत का नहीं है कोई विकल्प*
18. *कठोपनिषद 1/3/14*
19. *संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ.सं. 15 देवर्षि कलानाथशास्त्री*
20. *राजस्थान पत्रिका, 14 जनवरी, लेख 'भविष्य की भाषा भी है संस्कृत'*
21. *दैनिक हिन्दुस्तान, प्रो. वाचस्पति उपाध्याय लेख– संस्कृत की प्रासंगिकता*
22. *दैनिक भास्कर, 23 जनवरी, 2012 लेख–वेदों में है ब्रह्माण्ड का ध्वनि विज्ञान*
23. *दैनिक भास्कर, 1 दिसम्बर, 2014 लेख–वैश्वीकरण के दौर में विदेशी भाषाऐं भी अपनानी होगी।*
24. *राजस्थान पत्रिका, 14 जनवरी लेख–भविष्य की भाषा भी है संस्कृत*
25. *दैनिक भास्कर, 15 अप्रेल 2018, लेख–जे.एन.यू. में तैयार होंगे प्रशिक्षित पण्डित और धार्मिक पर्यटन के विशेषज्ञ हर धर्म और समुदाय के छात्र ले सकते हैं एडमिशन।*